International Journal of Education, Modern Management, Applied Science & Social Science (IJEMMASSS)
ISSN : 2581-9925, Impact Factor: 6.882, Volume 05, No. 01(II), January - March, 2023, pp. 53-57

जनजातीय शैक्षिक विकास एवं संवैधानिक प्रावधान

डॉ. हीरालाल बैरवा*

प्रस्तावना

शिक्षा किसी भी राष्ट्र को सभ्यता की मुख्यधारा में जोड़ने के लिये मूल आवश्यकता है। और शिक्षा ही किसी भी राष्ट्र को अपने उत्थान हेतु टिकाऊ ऊर्जा प्रदान करने का एक महत्वपूर्ण साधन होता है। राष्ट्रपिता महात्मा गांधी का विचार भी यही था कि शिक्षा किसी भी सभ्य राष्ट्र की प्राणवायु है, इसके अभाव में वह स्वतंत्र होकर भी परतंत्र है अर्थात बिन आत्मा के शरीर। भारत बहुत लंबे समय तक गुलामी की जंजीरों में जकड़ा रहा और जब स्वतंत्र हुआ तो शिक्षा की दृष्टि से स्वाभाविक रूप में काफी पिछड़ी हुई स्थिति में था। परंतु अब भारत सन् 2020 तक विकसित राष्ट्रों की कतार में खड़े होने के लिए तैयार है। इसने –देर आए दुरुस्त आए' की कहावत को चरितार्थ किया है। ऐसा इसलिये क्योंकि 1947 में भारत की साक्षरता अति न्यून थी परंतु आज 84.14 प्रतिशत भारतीय साक्षर हैं। सबसे प्रमुख तथ्य तो यह है कि 1976 में पहले शिक्षा की जिम्मेवारी सिर्फ राज्यों की हुआ करती थी। सन् 1976 में किए गए 42 वें संविधान संशोधन के माध्यम से यह समवर्ती सूची का विषय बन गया अर्थात अब राज्य और केंन्द्र दोनों मिलकर इस दिशा में अपने–अपने कदम उठाएंगे, परंतु सामंजस्य पूर्ण तरीके से। केन्द्र सरकार शिक्षा संबंधी नीतियां और कार्यक्रम तैयार करने तथा इनकी निगरानी करने में अपनी एक मुख्य भूमिका निभाती आ रही है। इसमें सबसे उल्लेखनीय राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1986 और कार्ययोजना 1986 है जिसे 1992 में अपडेट किया गया। संशोधित नीति में एक ऐसा शिक्षा प्रणाली की परिकल्पना है जिसके लक्ष्य हैं शिक्षा में एकरूपता लाना, प्रौढ़ शिक्षा कार्यक्रम एवं सर्वशिक्षा अभिया आदि को जनांदोलन का रूप दिया जाना और विशेष रूप से लड़कियों की शिक्षा पर विशेष ध्यान दिया जाना हैं। जो सन 1951 में महिला साक्षरत मात्र 8.86 थी,जो 2011 में बढकर 65.46 हो गई हैं । वर्तमान में जो राष्ट्रीय शिक्षा नीति लागू कि गई है वह भी समाज विकास में महत्वपूण भूमिका निभायेगी और समाज में शैक्षिक विकास को एक नई दिशा प्रदान करेगी ।

जनजाति का अर्थ

जनजाति का तात्पर्य एक ऐसे मानव–समूह से समझ लिया जाता है, जिसका रहन–सहन और रीति–रिवाज बहुत आदिम प्रकृति के हों।जनजातियों को ' आदिवासी' शब्द से केवल इसलिए सम्बोधित किया जाता है कि वे मानव की आदिकालीन संस्कृति की प्रतिनिधि हैं।

डॉ.जी.एस.घुरिये ने जनजातियों को पिछड़े हिन्दू शब्द से सम्बोधित करके यह स्पष्ट करने का प्रयत्न किया कि अधिकांश जनजातियों के धार्मिक विश्वासों में हिन्दू धर्म की विशेषताओं का समावेश है।

डी.एन. मजूमदार ने जनजाति को परिभाषित करते हुए लिखा है – '' जनजाति परिवारों का एक ऐसा समूह है, जिसका एक सामान्य नाम होता है, जिसके सदस्य एक निश्चित क्षेत्र में निवासी करते हैं, एक सामान्य भाषा बोलते हैं तथा विवाह और व्यवसाय के विषय में कुछ विशेष नियमों का पालन करते हैं। ''

* सह आचार्य–समाजशास्त्र, एस.पी.एन.के.एस. राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, दौसा, राजस्थान।

लिंटन के शब्दों में – '' साधारणतया जनजाति अनेक भ्रमणशील झुण्डों का एक समूह है जो एक भू–भाग पर रहता है तथा जो अपनी सांस्कृतिक समानताओं, निकट सम्पर्क एक समान सामाजिक हितों की भावना के आधार पर एकता से बंधा रहता हैं। ''

गिलिन और गिलिन के अनुसार – '' जनजाति उन विभिन्न समूहों से बनने वाला एक बड़ा समुदाय है, जो एक सामान्य क्षेत्र में निवास करता है, एक सामान्य भाषा का प्रयोग करता है तथा जिसकी एक सामान्य संस्कृति होती है। ''

राल्फ पिडिंग्टन के शब्दों में '' – जनजाति को व्यक्तियों के एक ऐसे समुदाय के रूप में स्पष्ट किया जा सकता है, जो एक समान भाषा बोलता हो, समान भू–भाग में निवास करता हो तथा जिसकी संस्कृति में समानता पाई जाती हो। ''

डॉ रिवर्स के शब्दों में – '' जनजाति एक ऐसे सरल प्रकार का सामाजिक समूह है जिसके सदस्य एक सामान्य भाषा का प्रयोग करते हों तथा युद्ध आदि सामान्य उद्देश्यों के लिए सम्मिलित रूप से कार्य करते हो। '' डॉ. रिवर्स ने सामान्य निवास सीान को इसलिए महत्त्व नहीं दिया, क्योंकि अनेक जनजातियाँ प्रातः धुमन्तु या खानाबदोश होती हैं। परन्तु डॉ. मजूमदार का कथन है कि इसका यह अभिप्राय नहीं है कि जनजातियों का अपना एक सामान्य क्षेत्र नहीं होता है। घुमन्तू प्रकृति के होते हुए भी उनका एक विशिष्ट निवास सीान होता ही है।

आर.एन.मुकर्जी – का मत है कि – '' एक जनजाति वह क्षेत्रीय मानव समूह है, जो भू–भाग, भाषा, सामाजिक नियमों और आर्थिक कार्यों आदि के विषय में सामान्यः एक सूत्र में बंधा होता है। ''

चार्ल्स विनिक : का कहना है कि – '' एक जनजाति एक ऐसा सामाजिक समूह है, जिसमें साधारणतः निश्चित क्षेत्र, भाषा, सांस्कृतिक समरूपता तथा सूत्रित सामाजिक संगठन आता है,

जो उपसमूहों जैसे– गोत्रों को सम्मिलित कर सकता है। ''

इन सभी परिभाषाओं से यह स्पष्ट होता है कि जनजाति एक अन्तर्विवाही और क्षेत्रीय समूह है जिसके सदस्य भू–भाग, भाषा, संस्कृति, धार्मिक विश्वासों और व्यवसाय की समानता के कारण अपनी अलग पहचान बनाए हुए है।

जनजातीय कल्याग एवं विकास सम्बन्धी संवैधानिक प्रावधान

(Constitutional Provisions for Tribal Welfare)

भारत में स्वतन्त्रता के बाद समानता के सिद्धान्त के आधार पर विकास की प्रक्रिया को प्रभावपूर्ण बनाने के लिए यह आवश्यक समझा गया कि समाज के दुर्बल वर्गों की स्थिति मे सुधार करने के लिए उन्हें विशेष संवैधानिक सुरक्षा प्रदान की जाए। इस दृष्टिकोण से भारतीय संविधान के अनुच्छेद 46 में यह कहा गया है कि – '' राज्य अपने दुर्बल वर्गों और विशेष कर अनुसूचित जनजातियों तथा जातियों के शैक्षणिक और आर्थिक हितों की रक्षा करने का विशेष ध्यान रखेगा एवं सामाजिक अन्याय और सभी तरह के शोषण के विरुछ उन्हें संरक्षण प्रदान करेंगा। '' इस प्रकार जनजातियों के लिए दी जाने वाली संवैधानिक सुविधाओं को दो मुख्य भागों में विभाजित किया जा सकता है– एक वे जिनका उद्देश्य अनुसूचित जनजातियों को आवश्यक सुरक्षा और संरक्षण प्रदान करना हैं और दूसरी वे जिनका सम्बन्ध जनजातीय विकास से है। इनसे सम्बन्धित प्रमुख संवैधानिक प्रावधानों को निम्नांकित रूप से समझा जा सकता है।

- संविधान के अनुच्छेद 15 (भाग–3) में स्पष्ट किया गया है कि धर्म, प्रजाति, जाति अथवा लिंग के आधार पर देश के निवासी किसी भी नागरिक के बीच किसी तरह का विभेद नहीं किया जाएगा। यह प्रावधान इसलिए किया गया है कि अतीत में जनजातियों को उनके धर्म तथा प्रजाति के आधार पर शेष समाज से पृथक् किया जाता था।
- अनुच्छेद 29–2 के द्वारा यह व्यवस्था की गई कि सरकार द्वारा संचालित अथवा सरकारी कोश से सहायता पाने वाली शिक्षण संस्थाओं में उन्हें प्रवेश पर कोई रूकावट नहीं रखी जाए।

- अनुच्छेद 164 भाग–6 के अनुसार मध्य प्रदेश, बिहार तथा उड़ीसा में जनजातीय कल्याग पृथक् मन्त्रालय स्थापित करने की व्यवस्था की गई।
- अनुच्छेद 224 तथा पाँचवीं और छठी अनुसूचियों के अनुसार जनजातीय क्षेत्रों के प्रशासन एवं नियन्त्रण एवं नियन्त्रण के लिए विशेष व्यवस्था करने का प्रावधान रखा गया।
- अनुच्छेद 224 भाग–1 से सम्बन्धी पाँचवीं अनुसूचियों के अन्तर्गत एक 'जनजातीय सलाहकार परिषद्' की स्थापना की व्यवस्था की गई। इस परिषद् का कार्य आवश्यकतानुसार नई अनुसूचित जनजातियों की पहचान करना तथा उनके विकास को दिशा–निर्देश देना है। इस परिषद् के तीन–चौथाई सदस्य अनुसूचित जनजातियों में से चुने हुए राज्य विधानसभाओं के सदस्यों में से रखने की व्यवस्था की गई।
- अनुच्छेद 330 तथा 332 के द्वारा संसद तथा राज्य विधान मण्डलों में 25 जनवरी 2000 तक अनुसूचित जनजातियों के लिए स्थान सुरक्षित रखने की व्यवस्था की गईं है।
- अनुच्छेद 338 में राष्ट्रपति के द्वारा अनुसूचित जनजातियों के विकास के लिए एक विशेष अधिकारी की नियुक्ति का प्रावधान रखा गया है। इसका कार्य जनजातियों के कल्याग के लिए व्यावहारिक सुझाव देना होगा।
- अनुच्छेद 339 के द्वारा राष्ट्रपति कभी भी अनुसूचित जनजातियों के प्रशासन तथा कल्याण सम्बन्धी रिपोर्ट की मांग कर सकते हैं। इसके अतिरिक्त केन्द्र सरकार को अनुसूचित जनजातियों के प्रशासन और कल्याण कार्यों के लिए राज्यों को विशेष निर्देश देने का भी अधिकार दिया गया है।
- अनुच्छेद 342 के अन्तर्गत राष्ट्रपति को सम्बन्धित राज्य के राज्यपाल की सलाह से किसी भी जनजाति को अनुसूचित जनजाति घोषित करने का अधिकार दिया गया।
- अनुच्छेद 365 के अन्तर्गत राष्ट्रपति को सम्बन्धित राज्य के राज्यपाल की सलाह से किसी भी जनजाति को अनुसूचित जनजाति घोषित करने का अधिकार दिया गया।
- अनुच्छेद 365 भाग–4 के द्वारा यह प्रावधान किया गया है कि सार्वजनिक सेवाओं के लिए प्रत्याशियों का चुनाव करते समय अनुसूचित जनजातियों के हितों का विशेष ध्यान रखा जाएगा। इसी प्रावधान की भावना के अनुसार केन्द्र सरकार की खुली प्रतियोगिता के द्वारा होने वाली नियुक्तियों में अनुसूचित जनजातियों के लिए 7.5 प्रतिशत स्थान सुरक्षित रखे जाते है। विभिन्न राज्य सरकारों ने अपने राज्य में अनुसूचित जनजातियों की जनसंख्या के प्रतिशत को देखते हुए नौकरियों में उनके लिए स्थान आरक्षित किए है।
- अनुच्छेद 23 में यह व्यवस्था की गई है कि कुछ अन्य वर्गों के साथ अनुसूचित जनजातियों में जबरन देह के व्यापार और बंधुआ मजदूरी पर प्रतिबन्ध लगाया जाए। अनुसूचित जनजातियों के संरक्षण और विकास से सम्बन्धित संवैधानिक प्रावधानों को प्रभावपूर्ण बनाने के लिए केन्द्र सरकार ने सन् 1989 में ' अनुसूचित जाति तथा अनुसूचित जनजाति (अत्याचारों की रोकथाम) अधिनियम' पास किया जो पूरे भारत में 30 जनवरी, 1990 से लागू हो गया है।
- शिक्षा का अधिकार , जो वर्तमान में एक कानून बन गया हैं । अर्थात अब 14 वर्ष के बच्चों को शिक्षा प्राप्त करने का कानूनी हक हो गया हैं जिसमें निशुल्क शिक्षा प्राप्त करना प्रत्येक बच्चे का कानूनी अधिकार हैं । जो देश के विकास में एक महत्वपूर्ण कदम हैं ।

'संविधान (पैसठवाँ संशोधन) अधिनियम, 1990' के द्वारा संविधान के अनुच्छेद 338 में जनजातियों के लिए विशेष अधिकारी की नियुक्ति के स्थान पर एक ''राष्ट्रीय अनुसूचित जनजातीय आयोग'' बनाने का प्रावधान किया गया। इस आयोग को ऐसे सभी अधिकार दिए गए हैं जिनकी सहायता से जनजातियों के सामाजिक व आर्थिक विकास के लिए आवश्यक योजनाएँ तैयार की जा सकें तथा विभिन्न राज्यों को आवश्यक सलाह दी जा सकें। संवैधानिक प्रावधानों के अनुरूप अनुसूचित जनजातियों के कल्याग के लिए संसद की एक स्थायी समिति की स्थापना

की गई है। संविधान के अनुच्छेद 164 के प्रावधान को पूरा करने के लिए मध्य प्रदेश, बिहार और उड़ीसा मे केन्द्र की संसदीय समिति के नमूने पर राज्य विधान मण्डलों के सदस्यों की समितियाँ गठित की गई हैं। संविधान की पाँचवी अनुसूची के प्रावधानों के अनुसार अनुसूचित जनजातीय क्षेत्रों वाले सभी राज्यों मे जनजातीय सलाहकार परिषदों का भी गठन किया गया।

संवैधानिक प्रावधानों का मूल्यांकन

(Evaluation of Constitutional Provisions)

विभिन्न संवैधानिक प्रावधानों के संदर्भ में यह जानना आवश्यक है कि इन प्रावधानों ने जनजातीय समुदायों को कितना प्रभावित किया तथा इन प्रावधानों की प्रासंगिकता क्या है? वास्तविकता यह है कि जनजातीय विकास के लिए जाने वाले संवैधानिक प्रावधान इस सिद्धान्त पर आधारित हैं कि शताब्दियों से शोषित और उपेक्षित वर्गों का तब तक कोई विकास नहीं हो सकता जब तक उनके संरक्षण और विकास के लिए उन्हें विशेष अधिकार न दिए जाएँ। इस दृष्टिकोण से जनजातियों को दी जाने वाली **संवैधानिक सुरक्षाओं को पूरी तरह न्यायोचत** कहा जा सकता है। आज संवैधानिक प्रावधानों के फलस्वरूप राजकीय सेवाओं में जनजातियों का प्रतिनिधित्व बढ़ा है तथा धीरे–धीरे राजनैतिक चेतना का विकास होने से उनमें एक नया नेतृत्व विकसित हो रहा है। कुछ समय पहले जो जनजातियॉ स्थानान्तरित और पिछड़ी हुई खेती, शिकार, तथा मामूली दस्तकारियों के द्वार आजीविका उपार्जित किया करती थीं। उनकी आर्थिक दशा में व्यापक सुधार किया हुआ हैं। जनजातियों में बंधुआ मजदूरी का प्रचलन लगभग समाप्त हो चुका है। संवैधानिक प्रावधानों के फलस्वरूप ही जनजातियों में शिक्षा का प्रसार हुआ तथा उनके जीवन में रूढ़ियों और अंधविश्वासों का प्रभाव कम होने लगा। आज संसद और विधान मण्डलों में जनजातियों का प्रतिनिधित्व मिलने से उन्हें अपनी समस्याएँ दूर करने का अवसर मिला है। नए पंचायती राज अधिनियम के द्वारा अब सभी पंचायती राज संस्थाओं मे जनजातियों को अपनी जनसंख्या के अनुपात मे पद मिलने लगे है। जनजातियों के शोषण मे भारी कमी हुई है। जिन राज्यों मे जनजातियों जनसंख्या का प्रतिशत अधिक है, वहाँ संविधान की छठी अनुसूची के प्रावधानों के अनुसार ऐसी परिषदें गठित की गई जो जनजातियों के सामाजिक–आर्थिक हितों की रक्षा कर सकें। इस प्रकार संवैधानिक प्रावधानों ने जनजातियों का सामाजिक–आर्थिक विकास करने तथा उन्हें देश की मुख्य धारा से जोड़ने में सराहनीय योगदान किया है। इस आधार पर संवैधानिक प्रावधानों को पूरी तरह प्रासंगिक कहा जा सकता है।

शिक्षा ही वह साधन है जिसके द्वारा आदिवासी जनजाति समाज अपने बच्चों का बहुमुखी विकास कर सकते है। जनतन्त्र के आवश्यक गुणों का ज्ञान शिक्षा के द्वारा ही हो सकता है। अब इस बात की सबसे बड़ी आवश्यकता है कि गॉव में शिक्षा का व्यापक प्रचार –प्रसार किया जा रहा हैं और बेसिक शिक्षा अब सभी के लिए अनिवार्य कर दी हैं और सभी लोग बेसिक शिक्षा प्राप्त कर रहे है। समाज में शिक्षा के द्वारा व्यस्कों का सुधार किया जाए। समाज के विकास के लिए शिक्षा के साथ ही कृषि, उद्योग, स्वास्थ्य, मनोरंजन और नागरिकता आदि की भी शिक्षा दी जाने लगी हैं । और ग्रामवासियों को शिक्षित करने का हर सम्भव प्रयास किया जा रहा हैं। साथ ही भारत के गावों की उन्नति ग्रामवासियों की शिक्षा पर ही निर्भर है।

यदि आदिवासी जनजाति समाज शिक्षित हो जाती है तो वे अपनी विभिन्न समस्याओं का समाधान स्वयं कर लेंगे। आधुनिक युग में अशिक्षित व्यक्ति का कोई मूल्य नही है। जनतंत्र की सफलता शिक्षा पर ही निर्भर है।

शिक्षा की सामाजिक उपयोगिता

शिक्षा समाज की उन्नति के लिए अत्यन्त आवश्यक है। वह सामाजिक नियंत्रण का एक महत्वपूर्ण साधान है। शिक्षा के द्वारा सामाजिक विरासत को भी एक व्यक्ति से दुसरे व्यक्ति तक तथा एक समुह से दुसरे समुह तक पहुँचाया जा सकता है। सामाजिक प्रथाओं, रीति रिवाजों का ज्ञान हमें शिक्षा के द्वारा ही हो सकता है। आज की पीढ़ी पुरानी पीढ़ी से सम्बन्ध, शिक्षा के द्वारा ही स्थापित कर सकती है। संस्कृति के विकास के लिए शिक्षा अत्यन्त आवश्यक है। शिक्षा सामाजिक कुशलता की वृद्धि करती है। उत्तम नागरिक बनाने के लिए शिक्षा अत्यन्त आवश्यक है। जो व्यक्ति शिक्षित नही है वे राज्य के उत्तम नागरिक नही बन सकते। सामाजिक प्रगति के मार्ग में आने वाली बाधाओं को शिक्षा ही दूर कर सकती है।

शिक्षा के द्वारा मनुष्य में राष्ट्रीयता और अन्तर्राष्ट्रीयता की भावना विकसित होती है। सामाजिक जीवन में पग–पग पर शिक्षा की आवश्यकता है। ''मनुरो'' ने शिक्षा का कार्य ज्ञान की वृद्धि के साथ सामाजिक नियंत्रण, संस्कृति तथा सभ्यता का प्रसार सामाजिक प्रगति को प्रोत्साहन देना माना है। शिक्षा, ज्ञान–वृद्धि का ही साधन नही है बल्कि यह मनुष्य को सामाजिक भी बनाती है। वह मानव समाज के संगठन की नींव है। साथ ही समाज के सर्वांगीण विकास के लिए शिक्षा अत्यन्त आवश्यक है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. Dr. N. Majumdar: Races in Culture of India.
2. Gillin and Gillin, Cultural Sociology.
3. Dr. Rivers, quoted by D.N. Majumdar, Races and Cultures of India, Asia Publishing House, Bombay, 1958
4. R.N. Makherjee, People and Institutions of India, Saraswati Sadan. Mussorrie. 1969
5. Charles Winik, Dictionary of Anthropology योजना, 1, अक्टूबर 2006
6. भारत की जनगणना 2011 एवं विश्व जनसंख्या
7. सुनील गोयल, भारत में सामाजिक परिवर्तन, दीपक परनामी आर.बी.एस.ए. पब्लिशर्स एस.एम.एस. हाइवें जयपुर 2003

❖◆❖